दो शब्द

महाराज अग्रसेन अग्रवाल जाति के संस्थापक थे। उन्होंने अपने पैतृक राज्य को अपने छोटे भाई शूरसेन को सौंप कर अग्रोहा गणराज्य की स्थापना की थी।

एक रुपया और एक ईंट की सहायता के सिद्धान्त पर समाजवाद की बुनियाद डाली थी। अहिंसा परमोधर्मः को अपना कर, वैष्णव समाज की रचना की थी।

१८ गोत्रों की रचना कर के समाज को एक सूत्र में बांधा था।

विदेशी आक्रमणों के कारण अग्रोहा नगर केवल खण्डहरों के रूप में रह गया। हजारों नारियों ने अपने सतीत्व की रक्षा के लिए, जौहर किया। शीला माता भी इसी स्थान पर सती हुई थी। महाराज अग्रसेन के वंशज सारे संसार में बिखर गए।

हमारे लिए यह एक परम सौभाग्य की बात है कि शताब्दियों के बाद, आशा का सूर्य पुनः उदय हुआ है। अग्रवालों ने अपनी जाति के जनक को पहचाना है। उनके मन में अग्रोहा को तीर्थ स्थान बनाने की उत्कृष्ट अभिलाषा जागृत हुई है। अग्रोहा की पावन भूमि में बने, सती शीला के मंदिर का जीर्णोद्धार हो रहा है। मंदिर पर भाद्रपद अमावस्या के मेले में भाग लेने, देश भर से हजारों तीर्थ यात्री अपनी श्रद्धा के फूल चढ़ाने आते हैं। वहां पर धर्मशालाएं बनाई जा रही हैं। महालक्ष्मी का मंदिर बन रहा है।

आशा है, महाराज अग्रसेन की राजधानी अग्रोहा, अब अवश्य तीर्थ स्थान बन जाएगी।

—तिलकराज अग्रवाल
१०७ ठाकुरद्वार रोड,
बम्बई–४०००००२

महासती शीला माता की पारम्परिक आरती

शीला मैया, पार कर नैया, नैया में ठोकर मार।
गांव गांव, घर घर में मैया ! तेरी ही जयकार।

०

श्री हरभजनशाह की बेटी; अग्रोहा की प्यारी;
शीला माता की महिमा है, तीन लोक से न्यारी;
स्यालकोट के मेहताशाह को, पहनाया था हार।

०

जैसे भ्रमर-कलीं ने जोड़ा, अमर प्रेम का नाता;
शीला ने समझा था पति को, अपना भाग्य-विधाता;
धन्य शाह था, धन्य थी शीला, धन्य था वह घरबार।

०

वीर रिसालू राजा का था, मेहताशाह दरबारी;
बुद्धि, शक्ति में मेहताजी की, धाक जमी थी न्यारी,
वीर रिसालू करते थे, मेहता से बेहद प्यार।

०

सच्चा प्यार किया था पति से, तूने शीला माता,
जो भी सुनता, वह श्रद्धा से अपना शीश झुकाता,
सती पती की महिमा की थी, दूर - दूर जयकार।

०

दुलहिन शीला रूपमती थी, तीन लोक से न्यारी,
अपने सत से सींच रही थी, जीवन की फुलवारी,
चक्र घूमता रहा भाग्य का, जीत के पीछे हार।

कारिन्दे ने, कहा रिसालू से 'उस मणि को पाना,
जिसकी सुन्दरता के आगे, झुकता सकल जमाना,
खिल जायेगी मन की बगिया, पाकर वह उपहार।'

०

मेहताशाह को बाहर भेजा, छल का जाल बिछाया,
दुष्ट रिसालू नाटक करने, शीला के घर आया,
पाप नहीं छिपता सतियों से, डट कर किया प्रहार—

०

हाथ जोड़कर, क्षमा मांग कर, महल में वापस आया
भेज दूत को मेहताशाह को, वापस था बुलवाया,
सती सेज पर छिपा दिया था, पापी ने अंगार।

०

लौटा मेहताशाह, सती शीला ने अति सुख पाया,
छिपी अंगूठी ने शीला के सत में दाग लगाया;
गंगा जैसी सती के ऊपर कैसा हुआ प्रहार?

०

मेहताशाह हो गया पागल सुन दासी की बातें;
भाग्य किया करता है कैसी निर्दोषों पर घातें,
प्राण पखेरू उड़ा शाह का, अपने पंख पसार।

०

पति की कायां धरी गोद में सती चिता पर सोई,
अमर सती शीला के शत को, भूल न पाया कोई,
हुए हजारों वर्ष, द्वार पर आते हैं नर नारी,
महासती शीला की महिमा, गाते बाम्बार।

—आचार्य शब्दानंद सरस्वती—
(हरिद्वार)

अग्रोहा की सती माता शीला देवी का जीवन परिचय

अग्रोहा अग्रवालों की जन्मभूमि है। प्राचीन समय में अग्रोहा एक विशाल नगर था। इस नगर में बावन करोड़ की सम्पत्ति के स्वामी सेठ हरभजन शाह रहते थे। उनकी इकलौती पुत्री का नाम शीला देवी था। शीला का विवाह सियालकोट के दीवान मेहता शाह के साथ हुआ था। शीला देवी अपने समय की अद्वितीय सुन्दरी थी। सियालकोट के राजा रिसालू ने जब शीला की सुन्दरता का वर्णन सुना, तब एक योजना बनाकर मेहता शाह को राजकार्य के बहाने रोहतासगढ़ भेज दिया।

एक रात राजा रिसालू शीला के महल में जा पहुँचा। शीला गहरी निद्रा में सोई हुई थी। पैरों की आवाज सुनकर वह जग गई और उसने अपने कर्मचारियों को सहायता के लिए पुकारा। रिसालू ने अपना परिचय देते हुए सहायता की याचना को निरर्थक बताया। शीला देवी ने तुरंत ही संकट का अनुमान लगा लिया और झपट कर राजा के बाल पकड़ लिए। राजा को पृथ्वी पर पटक कर शीला उसकी छाती पर बैठ गई। अपने आँचल से कटारी निकाल कर, जब शीला ने राजा की छाती में घुसाना चाहा, तब राजा ने हाथ जोड़कर क्षमा मांगी। शीला को दया आ गई। उसने राजा को छोड़ दिया।

राजा ने दूसरे ही दिन एक सेवक को रोहतासगढ़ भेजा और मेहता शाह को सियालकोट बुला लिया। मेहता शाह घर पहुंचकर जब विश्राम करने के लिए शैया पर लेटा, तब कमर में कुछ चुभा। बिछौने की चादर हटा कर देखा, तो सोने की अँगूठी मिली। उस पर राजा का नाम लिखा था।

मेहता ने शीला को बुलाकर पूछताछ की, पर शीला संतोषप्रद उत्तर नहीं दे सकी। नौकरों ने भी फुसफुसाहट कर शीला को चरित्रहीन बताया। अब शीला के लिए जीवन भार बन गया। हरभजन शाह को जब इस घटना की जानकारी मिली, तब वह शीला को अग्रोहा ले गया।

कुछ वर्षों के बाद एक दिन मेहता शाह की एक सेविका ने क्षमा मांगते हुए कहा—"शीला देवी सती है, पतिव्रता है। मेरी मृत्यु निकट है, अतः मुझ से जो भूल हुई, उसकी जानकारी दे रही हूं। शीला की शैया पर राजा रिसालू की अँगूठी मैंने ही छिपाई थी। इस कार्य के लिए मुझे बहुत धन मिला था। मैं लोभ में अंधी हो गई थी। आप मुझे क्षमा कर दो, मेहताशाह इस सत्य को सुनकर पागल हो गये। पश्चाताप की आग में जलते हुए मेहताशाह बन-बन भटकने लगे। अग्रोहा पहुंचने के लिए आतुर मेहताशाह गिरते-पड़ते अग्रोहा के निकट पहुंचे। भूख-प्यास के कारण उनका वहीं देहांत हो गया। शीला देवी को जब पति के निधन की सूचना मिली, तो रोती हुई पति के शव के पास आई। शीला देवी पति का शव को अपनी गोद में लेकर चिता में बैठ गई। जहां शीलादेवी सती हुई थी, उस स्थान पर एक मंदिर बनवाया गया। राजा रिसालू को इस घटना की जानकारी मिली, तो उसे भी आत्मग्लानि हुई। उसने भी आत्महत्या करने का विचार किया, पर गुरू गोरखनाथ ने सलाह दी 'राजा' मोह को त्यागकर योगी बन जा, इसीसे तेरा कल्याण होगा—राजा रिसालू उसी क्षण गोरखनाथ का शिष्य बन गया।

यह घटना एक हजार वर्ष से भी अधिक पुरानी है। इन एक हजार वर्षों में, अनेक बार य मंदिर बना और टूटा, पर शीला देवी के चमत्कार में कोई अन्तर नहीं आया। आज कल 'अग्रोहा विकास संस्थान' के संस्थापक, श्री तिलकराज अग्रवाल की देखरेख में एक विशाल मंदिर बनाया जा रहा है। शीला देवी के चरणों में सिर झुकाने वाले हर व्यक्ति की मनोकामना आज भी पूरी होती है। □

आदर्श महा सती शीला माता की अमर गाथा

"हो अमर सुहागिन, पुत्रवती, जीवन में सब सुख पाना तू।
पति ही परमेश्वर है जग में, शीले ! सति–धर्म निभाना तू ॥

तू श्रेष्ठ वंश में जन्मी है, यह बात भूलना मत बेटी !
दोनों कुल को ऊंचा करना, यह सीख बिसरना मत बेटी ॥"

"हे पूज्य पिता !" बोली बेटी, आगे नहिं कुछ भी बोल सकी।
मन में कितनी ही घटा उठी, पर जीभ नहीं वह खोल सकी ॥

रसना को पा असमर्थ व्यर्थ, आंखों ने धीरज त्याग दिया।
जो कहा दृगों से नयनों ने, वह पितृ–हृदय ने जान लिया ॥

□

आँसू आशीषें, गीत लिए, यों विदा हो गई पीहर से ।
जाना–पहिचाना सब छूटा, उर–डोर बंधी पति के घर से ।।

विख्यात सेठ अग्रोहा के, हरभजनशाह बावन क्रोड़ी ।
उनकी पुत्री से स्यालकोट के मेहता ने जोड़ी जोड़ी ।।

शीला जा पहुंची स्वसुर–सदन, महलों में गूंजी शहनाई ।
इस मधुर मिलन की बेला में, सबने मन की निधि सी पाई ।।

विष्णु–रमा, शिव–पार्वती, रति–मन्मथ, ब्रह्मा – ब्रह्माणी ।
शशि–सुधा मिले वसुधा पर ज्यों, मिल गई इन्द्र को इन्द्राणी ।।

□

दो देह, नेह से एक हुईं, सुख–श्रोत वहां पर बहता था ।
आदर्श प्रेम की गाथा यह, हर घर का बच्चा कहता था ।।

कुछ लोग यहां पर ऐसे हैं, पर सुख से दुखी रहा करते ।
जा कहा रिसालू राजा को, मुंह–लगा एक हिम्मत करके ।।

"राजन ! मेहता की पत्नी सी, देखी न सुनी है और कहीं ।
यह अजब–गजब सेवक भोगे, स्वामी को जो सुख मिले नहीं ।।

मुख शरद ऋतु का पूर्ण चंद्र, प्रफुल्ल कमल से नयन बड़े ।
बिम्बा फल से हैं युगल अधर, बोले तो जैसे फूल झड़े ।।"

□

"दाड़िम दाने सी दंत–पंक्ति मुस्काने में मोती बिखरें ।
नासिका सुआ की चोंच सरिस, चम्पा देही देखें निखरें ।।

उत्तंग शिखर से उन्नत कुच, मानो कटि लोच लवंग लता ।
भुज–कमल नाल, स्तम्भ–जंघ, विधि का कुछ रहस्य न लगा पता ।।"

शीला की सुन्दरता सुनकर, नृप चकराया, कुछ ललचाया ।
अनुचर भेजा मेहता के घर, उसको महलों में बुलवाया ।।

आओ प्रिय मित्र, यहां बैठो, बाजी खेलें दो–चार आज ।
गोटियां हेम की, मखमल की, चौपड़ सजवायें सकल साज ।।

□

फिर रत्न–जड़ित पासे लेकर, राजा ने गुरु को याद किया ।
जाजम पर आये तीन देख, अपशकुन हृदय में मान लिया ।।

मेहता ने पासे ले कर में, उनको शीला की आन दिला ।
जब दाँव चला पौ–बारह थी, पच्चीस देख मन–कमल खिला ।।

तब राव रिसालू ने पूछा, 'शीला है किसका नाम कहो ।
करते हो याद खेल तक में, ऐसा क्या गुण है खास कहो ।।'

कुछ सकुचित हो, कुछ गर्वित हो, बोले मेहता मुस्का करके ।–
'बड़भागी हर सती का पति है, मैं धन्य शील को पाकर के ।।'

□

सुन हुआ रिसालू उत्प्रेरित, मन मद–बिन हुआ नशीला सा ।
जो कुछ भी सुन्दर दिख पड़ता, सब लगने लगता शीला सा ।।

आँखों में शीला ही शीला, बस गई हृदय में कुटलाई ।
मेहता से बोला "मित्र, सुनो इक कठिन समस्या है आई ।।
सुनता हूं, रोहतासगढ़ में, हैं राजद्रोह के बीज फले ।
यदि कोई तुम सा वहाँ जावे, तो दुष्ट जनों का सिर कुचले ।।

कुछ काम और भी करना है, सौ घोड़े लाना हैं ऐसे ।
मुंह माँगा मोल लगे चाहे, पर लांघ सकें सिन्धु जैसे ।।"

□

मेहताशाह बोले, "सेवक हूं, हर हुक्म बजा कर लाऊंगा ।
पर–देश–गमन से पहले मैं, शीला की सहमति चाहूंगा ।।"

इस तरह कुचक्रों में फंस कर, मेहता प्रवास में चला गया ।
अवसर पा इधर रिसालू ने, षडयंत्र रचाया एक नया ।।

मावस की घोर असित निशि में, राजा खुद मेहता सा बन कर ।
रक्षक को धोखा दे पहुंचा, शीला के महलों के अन्दर ।।

पद–ध्वनि सुन शीला चौंक उठी, देखा प्रियपति सा आंगन में ।
'कब आये, क्या क्या कर आये ?' कितने ही प्रश्न उठे मन में ।।

□

मेहता की सी आवाज बना, नृप बोला तब 'हे प्राणप्रिये !
तेरी स्मृति लायी मुझ को, कैसे बिन प्यारी प्राण जिये ।।'

स्वर–झलक लगी अनजानी सी, वह समझ गयी कोई लम्पट ।
था रोम–रोम पति से परिचित, हो क्रोधित झपट उठी झटपट ।।

'तू ठहर मूर्ख, रे धूर्त, चोर, मैं अभी बुलाती अनुचर को ।
मृत्यु देगी राजसभा, निश्चय ही प्रातः दुश्चर को ।।'

"राजसभा दे दण्ड किसे, मैं स्वयं रिसालू राजा हूं ।
इस स्वर्ग–पुष्प को राजभवन, मैं शोभित करनेवाला हूं ।।

□

'रक्षक ही भक्षक यहां पर, तब न्याय नहीं मिल सकता कल ।'
झट बाल पकड़ भू पर पटका, कह 'चख अपनी करनी का फल ।।'

नृप संभले उससे पहले ही, छाती पर चढ़ बैठी शीला ।
आंचल में कटारी खींच कहा—'अब फिर से कह तू प्रिय शीला ।।

राजा तो होता पिता तुल्य, संतान प्रजा उसकी होती ।
पर कामी कुत्ते के जग में, भगिनी, बेटी, मां कब होती ।।'

अबला की शक्ति साकार हुई, बन गई सिंहनी छुई-मुई ।
नृप हुआ पसीने से लथ-पथ, सिर चकरा आंखें पथराई ।।

□

छकु समय बाद मूर्च्छा टूटी, बोला कर जोड़ करुण स्वर में ।
'गौ मान मुक्त कर दो मुझको, संतान प्रजा मानूंगा मैं ।।'

नारी मन करुणा का सागर, बन मोम तुरत ही पिघल गया ।
अपराध क्षमा कर शीला ने, नृप काल-गाल से मुक्त किया ।।

चरण पकड़ नृप शीला के, बोला अति नम्र विनय स्वर में ।
'इस दुखित कथा को गुप्त रखो, जी सकूं मान से मैं जग में ।।'

संकेत क्षमा का पाकर नृप, निज प्राण बचाकर भाग गया ।
है दया दुष्ट पर उचित नहीं, हर बार दयालू ठगा गया ।।

□

अतृप्त वासना विष बन कर, राजा को डसती थी जैसे ।
अपमान–आग बन फूंक रहा, 'बदला लूं मैं इसका कैसे ?'

योजना बना डाली नृप ने, सूरज में दाग लगाने की ।
कंचन को कांच बनाने की, पानी में आग लगाने की ।।

शीला की दासी से मिलकर, करवाया विष–बीजारोपण ।
मेहता को लाने भेज दिया, नृप ने चर एक कुशल तत्क्षण ।।

राजाज्ञा पाते ही मेहता, लौटा प्रवास से हर्षा कर ।
कुछ ऐसा अनुपम चुम्बक था, वह खिंचा चला आया घर पर ।।

□

पति का आगमन सुना सहसा, वल्लरी खिली, जो मुरझाई ।
अति आतुर हो शृंगार किया, झट द्वार आरती, ले आई ।।

शशि देख कुमुदिनी थी विहंसी, बदली लख प्रमुदित मोर हुआ ।
दो बिछुड़े प्रणयी पुनः मिले, लम्बी निशि बीती भोर हुआ ।।

कुछ स्वस्थ हुए, जलपान किया, शीला से की मीठी बातें ।
'बीते विरहा के दिन कैसे, कैसे काटीं, सूनीं रातें ।।

सोचा पहले विश्राम करूं, मध्यान्ह–सभा में जाऊंगा।
जिस राजकाज से गमन किया, उसका सब हाल सुनाऊंगा ।।

□

जैसे ही लेटा शैया पर, कुछ गड़ा कमर में गोल–गोल।
विस्मित हो मेहता उठ बैठे, मखमली आवरण दिया खोल ।।

गिर पड़ी राजमुद्रा स्वर्णिम, स्पष्ट रिसालू अंकित था।
ज्यों अंगारों पर पैर धरा, प्रेमी मन पीड़ित, शंकित था ।।

आकाश गिरा, धरती खिसकी, विश्वास गया, विष–बास हुआ।
हिमपात हुआ आशाओं पर, सपनों का नन्दन नाश हुआ ।।

सम्भव नागिन का डसा बचे, नारी काटा है बचे नहीं।
देवी समझा, डायन निकली, विधि ऐसी रचना रचे नहीं ।।

□

संदेह सदेह अंगूठी थी, उसने ही निर्णय कर डाला।
हो गया पराजित प्यार पुरुष, नफरत ने पहनी जयमाला ।।

तत्काल बुलाया शीला को, पूछा 'नृप आया क्यों कैसे'।
नयनों में घृणा, क्रोधित था मन, वाणी में व्यंग भरा जैसे ।।

वह पुरुष–प्रकृति से परिचित थी, शक जाने क्या क्या कर डाले।
इसलिये बनी अनजानी सी, वह भेद छुपाया डरे–डरे ।।

पड़ गया अग्नि में घृत जैसे, 'कुलटे यह देख सबूत रहा !'
मुद्रिका दिखा मेहता बोले, 'लख तेरा यह करतूत रहा' ।।

□

तब सिसक–सिसक शीला बोली, 'गंगा सी पावन हूं अब भी।
है शपथ विष्णु व लक्ष्मी की, सती हूं परखो चाहे जब भी ।।

वनवास गर्भिणी सीता को, दे दिया एक अवतारी ने।
शक के कारण क्या-क्या न सहा, इस भारत की सन्नारी ने ।।'

शीला अब अपने घर में ही, परित्यक्ता थी, परदेसन थी।
सुध–बुध तन मन की उसे नहीं, घर में रहती वह योगिन थी ।।

वह दीपक बुझने जैसा था, जीवन में रस अब रहा नहीं।
हरभजन ले गये अग्रोहा, दोनों को कुछ भी कहा नहीं ।।

□

दिन रात महीने बीत गये, ऋतुएं कितनी ही बीत गयीं।
एक रात दासी ने मेहता से, डरते-डरते यह बात कही ।।

'आ गया बुढ़ापा मरना है, ना जाने मैं कब मर जाऊं।
जो रहस्य हृदय का भार बना, कह दूं तो सुख से मर पाऊं ।।

शीला देवी थी महासती, सीता, सावित्री से बढ़ कर।
विष–बीज अंगूठी मैं ही थी रखी, शैया पर ललचा कर ।।

दो दण्ड मुझे जो जी चाहे, स्वीकार करूंगी तन–मन से।"
बिखरे भ्रम के काले बादल, तब सत्य–सूर्य निकला फिर से ।।

□

वह विरहानल में जलकर अब, रटने शीला का नाम लगा।
गिर गया स्वयं की नजरों से, बन बन फिरता वह अलख जगा ।।

रोगी, भोगी, ढोंगी, जोगी, कोई उनको पागल कहता।
वस्त्र फटे, भूखा – प्यासा, मेहता पत्थर, गाली सहता ।।

गोकुल–मथुरा में दूरी क्या, गोपियां गई क्यों नहीं वहां।
क्यों विरह सहा ? प्रेमी मन को, समझा है जग में कौन कहां ।।

मेहता क्यों नहीं ससुराल गया, यह प्रश्न जटिल है अपने में।
विधि का विधान कुछ ऐसा है, प्रणयी पाता सुख सपने में ।।

□

कब कैसे पहुंचा अग्रोहा, शीला, शीला कह वहां पड़ा।
लोगों ने पहचानी मिट्टी, जब हंस बिराने देश उड़ा॥

शीला सुन सब स्तब्ध हुई, रोई, कलपी फिर मौन हुई।
शृंगार किया. मृत देही ले, चढ़ गई चिता पर छुई – मुई॥

चंदन के रथ पर बैठ सती, पति से मिलने उस लोक गई।
यों अमर सुहागिन हो जाना, कब बात यहां के लिए नई॥

राव रिसालू के कानों तक, जा पहुंची जब यह करुण कथा।
वह आत्म–ग्लानि में डूब गया, अन्तर को मथने लगी व्यथा॥

□

अग्रोहा आकर चिता बना, उसने भी जलने की ठानी।
गुरू गोरख पहुंचे उसी समय, ज्वाला में डाल दिया पानी॥

'मन की मलीनता जल जावे, है बड़ा न आत्मदाह इससे।
तू राज–मोह को छोड़-छाड़, जा अलख जगाता फिर अबसे॥'

बनी समाधी उसी जगह, शीला की स्मृति में सुन्दर।
नित जात–जड़ूले होते हैं, बन रहा वहां सुन्दर मन्दिर।

यह अग्र—सती की प्रेम कथा, जो श्रद्धा सहित सुने, गावे।
यह लोक और परलोक बना, 'शिवशंकर' वांछित फल पावे॥

□

— रचनाकार —

श्री शिवशंकर गर्ग

एम. ए. (हिन्दी) एम. ए. (इतिहास) आयुर्वेदरत्न
वैद्याचार्य, साहित्यरत्न, प्रभाकर द्वारा : सुधीर ट्रेडर्स,
देवीपुरा, सीकर (राजस्थान)

卐 卐 卐

बावन करोड़ी सेठ हरभजशाह

सेठ हरभजशाह का परिवार महम नगर में जाकर बस गया। एक व्यापारी ने ग्यारह सौ ऊंटों पर केसर लादकर अपने कारिंदों को यह आदेश देकर उस केसर को बेचने के लिये भेजा कि, समस्त केसर एक ही व्यक्ति को बेची जाए। उस व्यापारी का नाम श्रीचंद था। उसके कारिंदे नगर-नगर घूमते रहे, पर ग्यारह सौ ऊंटों पर लदी केसर खरीदने को कोई भी तैयार नहीं हुआ। अंत में, वह महम नगर में पहुंच गये, जहाँ सेठ हरभजशाह की हवेली का निर्माण हो रहा था। सेठ के मुनीम, गुमाश्तों ने हरभजशाह से इस व्यापारी की चर्चा की। हरभजशाह समझ गये कि यह प्रतिष्ठा का विषय है। महम से कोई व्यापारी निराश नहीं जा सकता। उन्होंने यह कह कर सारी केसर खरीद ली कि—'यह केसर उनकी नव निर्मित हवेली के रंगने के काम में आ जायेगी।'

श्रीचंद ने जब यह सुना, तो उसने सेठ हरभजशाह को एक पत्र लिखा और कहा कि उसके हवेली बनाने में कोई गर्व नहीं, जब तक उसकी जन्मभूमि निराश्रित एवं उपेक्षित पड़ी हो।

हरभजशाह को यह बात लग गई। उसने अग्रोहा के थेह से दो मील की दूरी पर एक दूकान खोल ली, तथा इहलोक और परलोक के वादे पर, रुपये उधार देकर, साथ ही जीवन उपयोगी हर सम्भव वस्तु देकर इच्छुक व्यक्तियों को अग्रोहा में जाकर बसने की प्रेरणा देता रहा।

अग्रोहा बसाने के समय में ही, एक बनजारा जिसका नाम लक्खीसिंह था, परलोक के वादे पर हरभजशाह से एक लाख रुपये उधार ले गया। कुछ समय बाद उसके मन में यह बात आई कि यह रुपया तो मैंने ले लिया हैं, यदि मैं इसे चुका नहीं पाया, तो अगले जनम में मुझे हरभजशाह का बैल बन कर इस रुपये को चुकाना पड़ेगा। उसने विचार किया कि बैल बन कर पिसने से अच्छा है कि यह रुपया ही वापस कर दिया जाय। ऐसा सोच कर, वह पुनः उसी दूकान पर गया, और कहा कि वह रुपये वापस करना चाहता है। इस पर हरभजशाह ने कहा कि वह रुपया तो उसने परलोक के वादे पर लिया है। वे इस लोक में वापस नहीं कर सकते।

लखीसिंह निराश होकर वापस आ रहा था कि उसे मार्ग में एक साधु मिला। साधु ने उसकी चिन्ता के कारण का पता लगाया। लखीसिंह ने समस्त हाल बताते हुए कहा, 'महाराज मुझे इस समय भार से छुटकारा दिलवाइये, नहीं तो मैं जीवन भर चैन से सो नहीं सकूंगा।' साधु ने कहा– 'अग्रोहा में जल की कमी है' अतः तुम इस रुपये से अग्रोहा में एक ऐसे तालाब का निर्माण करवाओ, जो अग्रोहा ही नहीं वरन आस-पास के क्षेत्रों के निवासियों की भी प्यास बुझा सके, लखीसिंह को यह बात जच गयी। उसने वैसा ही किया। उन रुपयों से उसने ८० एकड़ भूमि पर एक तालाब का निर्माण करवाया। साथ ही उसे स्वच्छ जल से पूरित कर उसके चारों ओर सुन्दर सुन्दर घाटों का निर्माण करवाया। कहा जाता है कि यह तालाब इतना लम्बा था कि एक बार इसमें तैरनेवाली गाय व बछिया किनारा न पा सकने कारण, उसी में डूब कर मर गईं. तब लोगों को इस तालाब की लम्बाई कम करवानी पड़ी।

तालाब के तैयार हो जाने पर, लखीसिंह ने उस पर पहरेदार नियुक्त कर दिये और यह आज्ञा दी कि इस तालाब का पानी कोई न

पी सके। लोगों के कारण पूछने पर उसने बताया कि यह तालाब तो हरभजशाह का निजी तालाब है, जिसका पानी उनकी आज्ञा के बिना कोई भी नहीं पी सकेगा।

जब हरभजशाह को यह पता चला कि तालाब के किनारे से लोग प्यासे लौट रहे हैं, तो उसे बड़ा दुख हुआ। उसने तुरन्त लखीसिंह को बुलाकर उसका सारा रुपया जमा कर लिया और तालाब खोल दिया। इस प्रकार धीरे-धीरे अग्रोहा पुनः आबाद हुआ और हरभजशाह की मूंछ और पगड़ी की शान सदा के लिये अग्रवाल समाज के इतिहास में प्रतिष्ठित हो गयी। इन्हीं सेठ हरभजशाह की सती शीला सुपुत्री थी। इस तालाब को लक्खी ताल भी कहा जाता था।

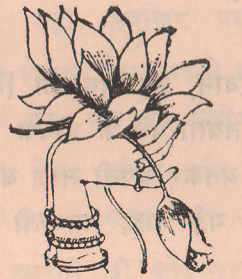

* श्रद्धा-पुष्प *

जो भी सुनता, जो भी पढ़ता, महासती की गाथा;
वह श्रद्धा से झुका लिया करता है अपना माथा;
अपने पति से जोड़ा करतीं, परमेश्वर का नाता;
इस नश्वर धरती पर उनका नाम अमर हो जाता।

□

जिन सतियों पर गर्व किया करती है भारत माता;
उन सतियों में, सूरज सा, शीला का नाम सुहाता;
उसके मंदिर पर श्रद्धा के सुमन गगन बरसाता;
इच्छा करती पूर्ण सती, जो भी चरणों में आता।

□

है जिसका वरदान, सुहागिन का सिंदूर सजाता;
थर्म, शील, पतिव्रता-धर्भ के दीपक को दमकाता;
'अबला सबला बनकर अपनी लाज बचा सकती है—'
पावन मंत्र दे गईं यह, सतवन्ती शीला माता।

□

सरस्वती कुमार 'दीपक'
३४/५८० महाराजा अग्रसेन
मार्ग, कुर्ला, बंबई-४०००७०

—: सती शीला की आरती :—

जय शीला माता, मैया जय शीला माता।
भक्त-जनों की रक्षक, सुख सम्पति-दाता॥
चूनर सिर, सिंदूर मांग में, तिलक भाल सोहे।
कमल नयन, मुख चंदा, त्रिभुवन-जन मोहे॥१॥

हरभजनशाह की बेटी, मेहता संग ब्याही।
पती प्रेम रस भीगी, सज्जन सुखदाई॥२॥

दूर देश मेहता को भेजा, नृप छलने आया।
पटक धरा पर नृप को, चण्डी का रूप किया॥३॥

नृप ने जाल रचाकर, पति को भरमाया।
कंचन काट लगै नहीं, आखिर पछताया॥४॥

तुम ब्रह्माणी, तुम रुद्राणी, तुम लक्ष्मी माता।
कृपा करो भक्तों पर, जय जय सती माता॥५॥

अग्रोहा में मन्दिर तेरा, शोभा अति भारी।
जात-जडूला लेकर, आते नर - नारी॥६॥

सती शीला की आरती जो कोई नर गावै।
शिव शंकर - माता की, कृपा - दृष्टि पावै॥७॥

— शिवशंकर गर्ग एम. ए. (हिन्दी-इतिहास)
द्वारा / सुधीर ट्रेडर्स, देवीपुरा पेट्रोल पंप, सीकर (राजस्थान)

सम्पदक : सरस्वतीकुमार 'दीपक'

आदर्श महासती
शीला माता की अमर गाथा

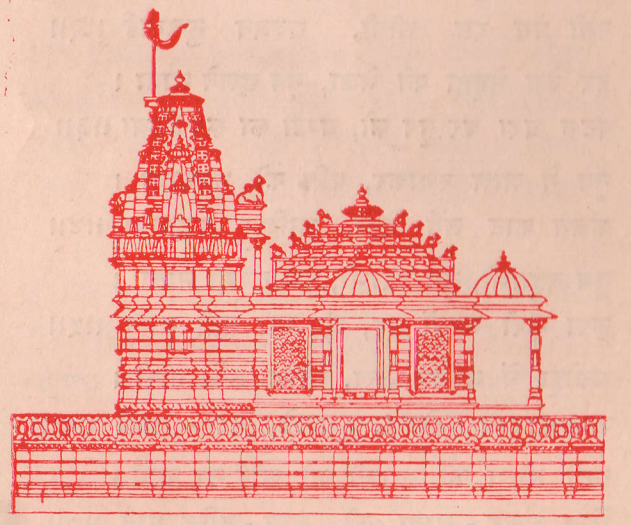

[सती शीला माता का भव्य मंदिर]

—प्रकाशक—
अग्रोहा विकास संस्थान, अग्रसेन भवन
२५१, ठाकुरद्वार, बम्बई–४००००२
*

Scanned

(1)

महाराजा अग्रसेन

यू. के. प्रिंटर्स, शिवशक्ति, बी. जी. खेर रोड, वरली, बम्बई–४०००१८